वार्षिक 150/- रुपये | सितम्बर 2024 | वर्ष 26 | अंक 11 | पृष्ठ - 28 | मूल्य 15/-रु.

गोसम्पदा

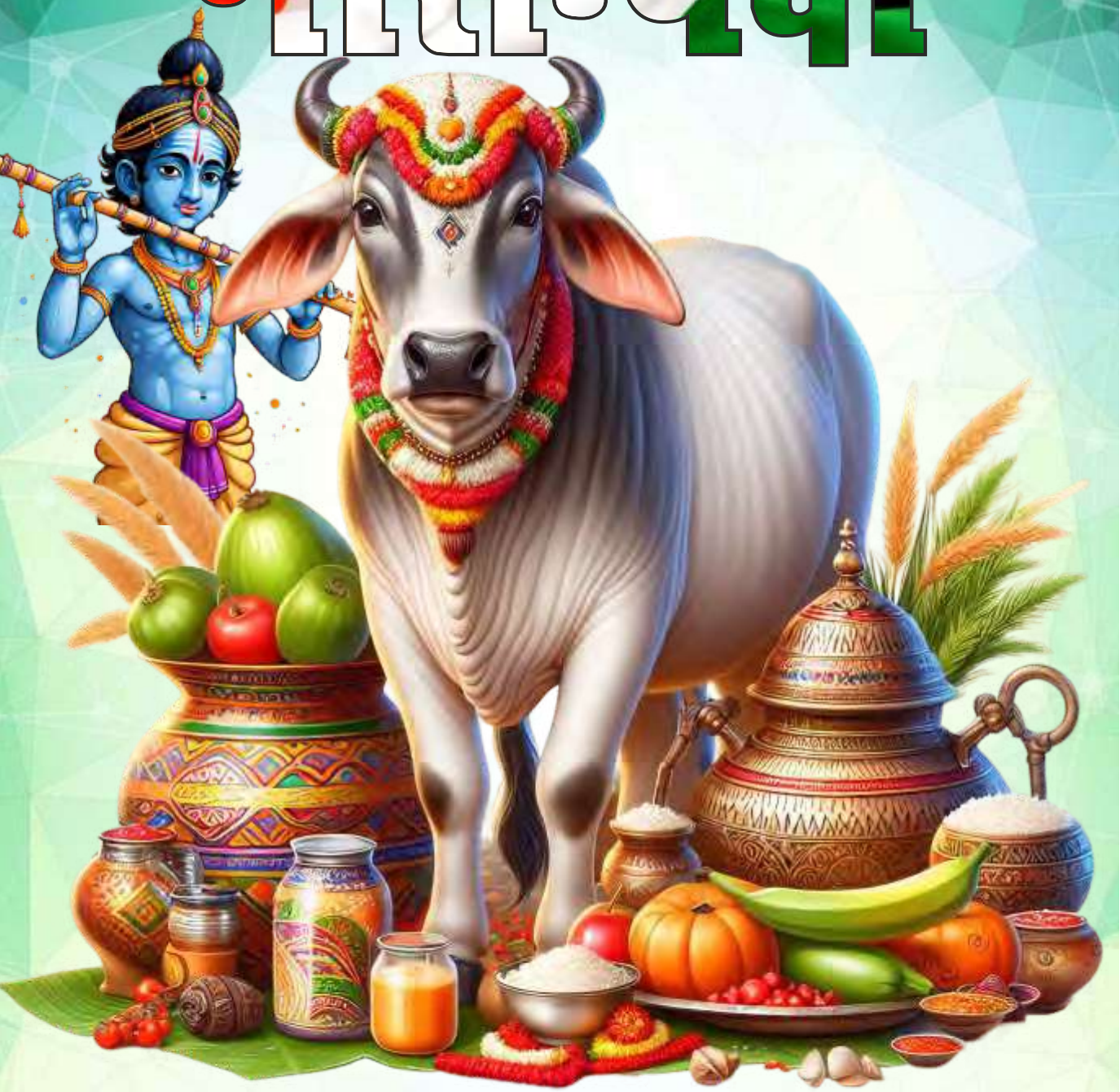

लाल किले की प्राचीर से मोदी जी का आह्वान

देश में समान नागरिक संहिता अनिवार्य

सम्पादकीय

लाल किले की प्राचीर से मोदी जी का आह्वान

देश में समान नागरिक संहिता अनिवार्य

परम गोभक्त प्रधानमंत्री मा. नरेंद्र मोदी जी ने गत 15 अगस्त को 78वें स्वाधीनता दिवस के अवसर पर लाल किले की प्राचीर से देशवासियों को संबोधित करते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा कि – "देश में **धर्मनिरपेक्ष नागरिक संहिता (सेक्युलर सिविल कोड)"** अतिशय आवश्यक है। उन्होंने भारत को 2047 तक **"विकसित राष्ट्र"** बनाने का संकल्प व्यक्त करते हुए **"एक राष्ट्र एक चुनाव"** का सपना साकार करने का आह्वान भी किया। स्मरण रहे, लगातार 11वीं बार लाल किले पर तिरंगा झंडा फहराने के बाद मोदी जी ने **भ्रष्टाचार और राजनीति में परिवारवाद** के खिलाफ संघर्ष जारी रखने की प्रतिबद्धता प्रकट की और देश को **"बाहरी शक्तियों के खतरों"** से सावधान भी किया। उन्होंने समान नागरिक संहिता (यूसीसी) के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों का उल्लेख करते हुए इस विषय पर गंभीर विचार–विमर्श की आवश्यकता पर भी बल दिया। उनका कहना था कि **"जो कानून धर्म के आधार पर देश को बांटते हैं, ऊँच–नीच का कारण बन जाते हैं....उन कानूनों का आधुनिक समाज में कोई स्थान नहीं हो सकता।"** उन्होंने साफ संकेत दिया है कि अब देश में समान नागरिक संहिता (यूसीसी) लागू करने की ओर तेजी से कदम बढ़ेगा। इसके अलावा उन्होंने किसानों के लिए अनेक लाभदायक योजनाओं की घोषणा करते हुए **"जैविक कृषि (गोवंश आधारित खेती)"** करने के लिए किसानों से विशेष आग्रह किया कि वे जैविक खेती को अपनाकर शुद्ध खाद्यान्न (रसायन मुक्त) पैदा करें, जो पूर्णताः स्वास्थ्यवर्धक होता है।

देश के सम्पूर्ण देशवासी भलीभांति इस तथ्य से अवगत हैं कि जब भारत **'विश्वगुरू'** के पद से सुशोभित था तब इसका मूल आधार गोमाता–गोवंश ही था। उस समय गोधन ही सर्वश्रेष्ठ सम्पदा माना जाता था। गोधन यानी गोसम्पदा (पंचगव्य) के माध्यम से ही देश में चहुंओर सुख–शांति और समृद्धि स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती थी। लोगों का जीवन सहज–सरल तथा सुखमय था। वास्तव में लोगों के सुखमय जीवन का मूल स्रोत गोमाता–गोवंश ही था। उल्लेखनीय है कि सर्वदेवमयी गोमाता की कृपा से ही रघुवंश था, रामराज था और सर्वश्रेष्ठ गोपालक–गोसंरक्षक योगेश्वर श्री कृष्ण द्वारा संस्थापित धर्म राज्य भी था।

स्वार्थवश या कहें अज्ञानतावश गोमाता–गोवंश की हत्या एवं गोमांस–भक्षण और गोवंश की घोर उपेक्षा के दुष्परिणामस्वरूप आज राष्ट्र के समक्ष अनेक विकराल भयावह समस्याएं व चुनौतियां विद्यमान हैं, जिनका समाधान ढूंढ़ा जाना राष्ट्रहित के परिप्रेक्ष्य में अनिवार्य है। इन चुनौतियों में समान नागरिक संहिता, बेरोजगारी, गांवों से शहरों की ओर पलायन, गरीबी, कृषि–किसान संकट, धर्म ग्रंथों (बाइबल व कुरान) की गलत व्याख्या आदि प्रमुख हैं। इसलिए राष्ट्रहित में इन विकराल समस्याओं का समाधान निकालना अपरिहार्य है, क्योंकि इनके समाधान से ही भारत विकसित देशों की श्रेणी में पहुंच सकता है। और यह कहना एकदम समीचीन होगा कि गोवंश–हत्या और गोमांस–भक्षण पर पूर्ण प्रतिबंध लगाने से इन समस्याओं का निराकरण तो होगा ही और भारत पुनः **'विश्वगुरू'** बनने की ओर अग्रसर हो जाएगा।

शाश्वत सत्य तो यह है कि आदिकाल से ही सम्पूर्ण मानवजाति के भरण–पोषण और मंगलकारी कल्याण में सर्वाधिक अतुलनीय योगदान है गोमाता–गोवंश का। यह कदापि न भूलें कि गोमाता बिना किसी भेदभाव के सभी धर्मों, पंथों एवं सम्प्रदायों के लोगों को अपने अमृतरूपी दूध (संपूर्ण पौष्टिक भोजन) का पान कराकर, अपने ही गोबर–गोमूत्र से आरोग्यता, संपन्नता भी प्रदान करती हैं। गोमाता–गोवंश के इन्हीं महान उपकारों को ध्यान में रखते हुए आजादी से पूर्व एवं बाद में गोवंश–हत्या पर पूर्ण प्रतिबंध लगाने हेतु अनेक बड़े–बड़े आंदोलन किये गये, हजारों साधु–संतों–गोभक्तों ने आत्माहुति दी, लेकिन तथाकथित राजनीतिज्ञों द्वारा शासन सत्ता बनाए रखने के लोभ–लालच में अभी तक गोवंश हत्या को नहीं रोका जा सका है। अतः यदि आध्यात्मिक–अहिंसक राष्ट्र भारत को **विकसित देश–विश्वगुरू** बनाना है तो गोवंश आधारित पवित्र जीवनशैली अपनाना अपरिहार्य है, अन्य और कोई भी विकल्प नहीं। इस परिप्रेक्ष्य में देश के सभी नागरिकों का परमकर्तव्य है कि वे गोवंश–पालन, संवर्द्धन, संरक्षण में तन–मन–धन और समय देकर यथासंभव सहयोग प्रदान करें।

(सम्पादक)

गोसम्पदा

वर्ष - 26 अंक-11 सितम्बर - 2024 पृष्ठ - 28

संरक्षक :
हुकुमचंद सावला जी

अखिल भारतीय गोरक्षा प्रमुख
दिनेश उपाध्याय जी
संकट मोचन आश्रम, सै. 6,
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-22
मो. : 9644642644
ईमेल : gosampada@gmail.com

सम्पादक :
देवेन्द्र नायक
संकट मोचन आश्रम, सै. 6,
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-22
मो. : 8130049868 कार्या. 011-26174732
ईमेल : gosampada@gmail.com

परामर्शदाता : प्रो. गुरुप्रसाद सिंह जी
मो. : 9838900596

प्रकाशक : राजेन्द्र प्रसाद सिंहल जी
मो. : 9810055638

प्रचार-प्रसार प्रमुख : जय प्रकाश गर्ग जी
मो. : 9654414174

व्यवस्थापक : रामानन्द यादव
मो. : 9958710672 कार्या. : 011-26174732

साज-सज्जा : सुमन कुमार

वैधानिक सूचना
'गोसम्पदा' से संबन्धित सभी वाद प्रकाशन तिथि से 3 माह के अंदर केवल नई दिल्ली स्थित न्यायालय में मान्य होंगे

सहयोग राशि
एक प्रति : रु. 15/-
वार्षिक : रु. 150/-
आजीवन : रु. 1500/-

अनुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
गो-महिमा, मातृभाषा हिन्दी-महिमा	04
धरती की जैविक सृष्टि का आधार है हमारा गोवंश	07
मोक्ष स्थल 'धेनुपुरीश्वर' मंदिर	10
पक्षाघात रक्षक-पंचगव्य चिकित्सा	12
भारत की सर्वांगीण समृद्धि का गोरक्षा ही है मूल मंत्र	14
विदेशी गायों के दूध से डायबिटीज	16
आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण कारक है गोधन	20
Gopala and Gomata	22
How Cows Communicate with Each Other in a Herd	24

हार्दिक निवेदन

सभी गोभक्त–गोप्रेमी बंधुओं से करबद्ध अनुरोध है कि वे इस पत्रिका का सदस्य अवश्य बनें और अन्य गोभक्तों को भी सदस्य बनायें। कृपया सभी लोग अपना वार्षिक अथवा आजीवन सदस्यता शुल्क निम्नलिखित बैंक व खाता नंबर में जमा कराएं–

पंजाब नेशनल बैंक, बसंत लोक, नई दिल्ली
खाता नम्बर - 04072010038910
IFSC CODE : PUNB0040710

नोट : शुल्क **"भारतीय गोवंश रक्षण संवर्द्धन परिषद"** के नाम पर जमा करें। सम्पर्क सूत्र : 011–26174732

विक्रमादित्य चौहान (पूर्व प्राचार्य)

गो-महिमा मातृभाषा हिन्दी-महिमा

"तू कहता कागद की लेखी,
मैं कहता आंखिन की देखी।"

– कबीर

कबीर ने उक्त कहावत न गोमाता, न मातृभाषा हिन्दी के सन्दर्भ में कही है, वरन व्यापक अनन्त संसार के सन्दर्भ में। मैं दोनों के सन्दर्भ में कह रहा हूं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात देश के कांग्रेसी नेताओं ने शत–प्रतिशत, गाय और हिन्दी दोनों की घोर उपेक्षा की थी, जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में। चूंकि मोतीलाल नेहरु के पुत्र थे जवाहर लाल नेहरु, जिनकी शिक्षा प्रारम्भ हुई थी एक आइरिश टीचर द्वारा घर पर अंग्रेजी में और जिन्हें गाय के दूध के पिलाने के स्थान पर अंग्रेजीयत के प्रभाव में बीफ खाने से अभ्यास कराया गया था। बच्चे का क्या दोष? **यथा माता–पिता तथा पुत्र, जैसा अन्न वैसा मन।** अस्तु, उक्त बालक नेहरु उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड भेजे गये। इस प्रकार जो कुछ और बनना–बिगड़ना था, बन–बिगड़ गया। इस तरह युवा नेहरु राजनीति में कूदा और गांधी जी को दिग्भ्रमित कर उनकी कृपा से प्रधानमंत्री बन गया। उसके प्रभाव–कुप्रभाव में हिन्दी और गोमाता की उपेक्षा हुई, इस तरह कि अब दोनों को पुनः उनके सम्भावित उच्च स्थान पर पहुंचाना गो–भक्तों और हिन्दी–भक्तों को पर्वतारोहण–सा लग रहा है। फिर भी प्रयास सराहनीय है। आपकी **गोसम्पदा** पत्रिका और **राष्ट्रधर्म** पत्रिका लखनऊ से प्रकाशित, ने अलख जगा रखी है। लेखक उन्हीं में अपनी शुद्ध आहुति डाल रहे हैं।

आंखिन देखी बात गोमाता के सन्दर्भ में। मैं अपने गांव में परिवार में दस–बारह वर्ष की अवस्था से देखता था – आठ बैल, दो–तीन गायें, छोटे–छोटे बछड़े–बछिया देखने में नयनाविराम चहल–पहल, खेतों में चार–चार हल खींचते–जोतते आठ बैल, पीछे चार हलवाहे, मेड़ पर काका, डंडा लिये बाबा, कभी–कभी मैं भी चला जाता देखता, इतना अच्छा लगता कि यदि आज का मोबाइल होता तो फोटो ले लेता और आज दिखा देता। गो–पालन कृषि प्रधान भारत की पुरातन परम्परा चली आ रही थी और जब फसल पकती, कटती,

जब 60–70 के दशक में ट्रैक्टर का आना हुआ, धीरे–धीरे बैल, हल, फाल, हलवाहे, गाय, दूध, गोबर, गोमूत्र सब समाप्त होते गये, लुप्त हो गये। लोहार, बढ़ई, कुम्हार, नाई भी गांव छोड़ कर चले गये। गांव की शोभाश्री चली गई, गांव सूने हो गये। इसी तरह हिन्दी की उपेक्षा हुई। गांव तक कुकुरमुत्ता अंग्रेजी स्कूलों की भरमार हो गई और बच्चों को अंग्रेजी की घुट्टी पिलाई जा रही है, जो सर्वथा अवांछित है देशहित में। काश! जनमानस और लोकतंत्र के नेताओं को होश आता और परम्परा को अपनाते।

पीटी जाती थी, खलिहानों में अन्न राशि प्रथमतः वहीं बाबा द्वारा मजदूरों को 1/12 अंश दिया जाता और फिर बैल गाड़ी द्वारा घर लाया जाता। मजदूरों द्वारा ही आंगन में अन्न राशि बीचोंबीच लगाई जाती, लगता **'लक्ष्मी'** आई बैठी हैं। मैंने उसकी धूप–आरती करते देखा है। और मेरी आंखों ने देखा था इस तरह किसी के चार हल, किसी के दो हल, किसी के एक हल, चलते खेतों में, इस प्रकार पूरे गांव में 15–20 हल चलते थे। और पूरे गांव में लगभग 100 से 150 संख्या में गायें–भैंसें, छोटे बैल और बड़े बछड़े–बछिया प्रातः छः बजे गांव से बाहर मैदान में लोग अपने घरों से ले जाकर एकत्रित करते थे और गांव में सहयोग–सहभागिता भाव से प्रत्येक दिन दो लोग पूरे झुण्ड को पूरे दिन चराते थे और सूर्यास्त पर गोधूलि में जिसे गौधुरिया कहा जाता था, गांव में वापस ले आते थे। तब प्राणियों को कोई नहीं लेने जाता था, वे स्वयं अपने–अपने घर में चले आते थे दौड़ते हुये अपने खूंटों पर, जहां रस्सी से मालिक लोग बांधते थे व कुछ चारा–पानी देते थे। कितनी उत्तम व्यवस्था थी। सभी प्राणी दोपहरी में मैदान में बैठकर आराम करते थे, जो गोबर वे देते थे वह वे दो लोग अपने घर ले जाते थे, कण्डा बनाते थे और घूर में डालते थे। इसी तरह रात भर का गोबर–मूत्र मिश्रित पलड़ों में भरकर घूर में डालते–डलवाते थे।

इसके अतिरिक्त सहयोग–सहकारिता का नमूना देखें–जिन गरीब दलितों–हलवाहों–मजदूरों के पास गोवंश नहीं होते थे, वे अनुमति लेकर गांव के सभी गोवंश को दिन भर मैदान में चराते–घुमाते और सारा गोबर घर ले जाकर कंडा बनाते थे व उसका प्रयोग ईंधन के रूप में करते थे।

एक सुखद सहयोग भावना देखने को मिलती थी। जिनके पास कोई दूध का साधन नहीं होता था, वे कभी–कभी बच्चे के लिये या मेहमान आने पर मांगते थे, तो लोग पाव–डेढ़ पाव दूध बिना किसी दाम के देते थे। सच, उस समय तो दूध कहीं बिकता ही नहीं था।

मैंने उस गोबर को खेतों में बैलगाड़ी द्वारा ले जाते हुये किसानों को देखा है और इस तरह एक बीघा में 5–6 बैलगाड़ी खाद के बड़े–बड़े ढेर कुछ दूर–दूर पर डाले जाते थे। फिर समय आने पर फावड़ा–पलड़े से फैलाया जाता था। फिर जोतते हुये, बोते हुये, कटते हुये भी मैंने देखा है। इस तरह से पैदा किये अन्न–सब्जियों को खाया भी है। वह स्वाद और स्वास्थ्यवर्द्धक तत्व अन्न में अब नहीं रहा। रासायनिक खादों ने सब नष्ट कर दिया।

जब 60–70 के दशक में ट्रैक्टर का आना हुआ, धीरे–धीरे बैल, हल, फाल, हलवाहे, गाय, दूध, गोबर, गोमूत्र सब समाप्त होते गये, लुप्त हो गये। लोहार, बढ़ई, कुम्हार,

नाई भी गांव छोड़ कर चले गये। गांव की शोभाश्री चली गई, गांव सूने हो गये।

इसी तरह हिन्दी की उपेक्षा हुई। गांव तक कुकुरमुत्ता अंग्रेजी स्कूलों की भरमार हो गई और बच्चों को अंग्रेजी की घुट्टी पिलाई जा रही है, जो सर्वथा अवांछित है देशहित में। काश! जनमानस और लोकतंत्र के नेताओं को होश आता और परम्परा को अपनाते।

अन्त में, गो–संरक्षण के लिए परमावश्यक है कि गो–गोवंश को जीवन पर्यन्त उसी तरह अपने घर–खूंटों पर रखें, जैसे अपने परिजनों को रखते हैं। मैंने यह भी अपने घर–गांव में देखा था ऐसा करते हुये। कोई उन्हें कमजोर–बुढ़ापा होने पर बेंचते नहीं थे, जो कसाइयों के हाथ अन्यथा लगते। गो–हत्या रोकने के लिये यह गोवंश पालने वाले लोगों को करना चाहिए। इसके अतिरिक्त राज्य सरकारें गोहत्या कानून बना कर कर्तव्य इतिश्री न समझें, कड़ाई के साथ पालन करायें। जो अपराधी पाये जायें उन्हें सख्त सजा दें।

इसके अतिरिक्त जैसे पहले होता था, गाय को मारने वाले मुंह ढंककर भीख मांग कर खाते थे और समाज–घर से बहिष्कृत कर दिये जाते थे, जब तक वे प्रायश्चित नहीं कर लेते थे। वैसी सामाजिक दण्ड–व्यवस्था का भी स्वागत करना चाहिए।

इस प्रकार समाज–सरकार दोनों गोवंश–संरक्षण के लिए जब तक एक साथ कदम नहीं उठायेंगे तब तक गोवंश–संरक्षण दिवास्वप्न ही होगा। अतः कृषक परम्परागत गोवंश आधारित कृषि की ओर लौटें और सरकार कमजोर किसानों को एक जोड़ी बैल, एक गाय, हाल–फाल– जुआठ के क्रय के लिये आर्थिक सहायता दे तथा वांछित सहायता – प्रोत्साहन दे तो कुछ ही वर्षों में किसान की दशा, गोवंश की दशा, मृदा की दशा में सुधार होगा और अन्त में स्वाद–शक्ति–ऊर्जा आयेगी। सब सुखी–समृद्ध–स्वस्थ होंगे। जैसे चक्रवर्ती सम्राट दिलीप –रघु–दशरथ–राम काल में और गोपाल–गोविन्द कृष्ण काल में थे। तब स्वराज, सुराज एवं राम राज होगा।

'दैहिक, दैविक, भौतिक तापा,
रामराज काहू नहीं व्यापा'

आज 21वीं शताब्दी में भी चरितार्थ होगा। काश! भारत और भारतवासी स्वतंत्रता प्राप्ति के अठत्तर साल बाद भी अब अविलम्ब परंपरागत कृषि, गोपालन, गोवंश संरक्षण–सम्वर्द्धन और मातृभाषा हिन्दी को स्वीकारें और अपनायें।

हरिशंकर दीक्षित 'पथिक'

धरती की जैविक सृष्टि का आधार है
हमारा गोवंश

बर्बर आक्रान्ता भी हमारे धर्म, संस्कृति और शिक्षा को उतनी क्षति नहीं पहुँचा सके जितनी क्षति व्यापार की ओट में आये अंग्रेजों ने पहुँचायी है। दुखद तो यह है कि यह क्षति स्वतन्त्रता के बाद भी निरन्तर होती रही है। माता–पिता के समान आदरणीय–पूजनीय हमारे परिवार का महत्वपूर्ण अंग जिसका स्वेद (पसीना) रुधिर बनकर पीढ़ी प्रति पीढ़ी हमारी शिराओं में प्रवाहित होता रहा है; आज वही गोवंश अंग्रेजों की मानस सन्तानों के कारण उपेक्षित–तिरस्कृत होकर दारुण दुख सहता हुआ मारा–मारा फिरता, विलुप्ति की कगार तक पहुँच चुका है।

हमारे धर्म और संस्कृति को उन अंग्रेजों ने निकृष्ट कहा जो धर्म का अर्थ जानते ही नहीं और सम्प्रदायों को धर्म मानते हैं। दासता काल में अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार अंग्रेजों के चाटुकारों की सन्तानों की शिक्षा से प्रारम्भ हुआ जो धीरे–धीरे चक्रवृद्धि ब्याज की भाँति बढ़ता हुआ आज सम्पूर्ण देश को अंग्रेजी भाषा का दास बना चुका है। इस शिक्षा ने गोवंश पर ऐसा कुठाराघात किया कि मातृ–पितृवत आदरणीय हमारी आजीविका का सुदृढ़ प्राकृत आधार आज हमारे द्वारा ही उपेक्षित–तिरस्कृत होकर विलुप्ति की कगार तक ढकेला–खदेड़ा जा रहा है। देश भर में कुछ गिने–चुने लोग ही हैं जो तन–मन–धन से इसे बचाने का प्रयास कर रहे हैं, किन्तु उनकी आवाज नक्कारखाने में तूती की आवाज की भाँति लुप्त हो जाती है तथा प्रयास ठीक वैसा ही है जैसा समुद्र पर सेतु निर्माण के समय रामायण में वर्णित गिलहरी का था। ऐसे लोग गिलहरी की भाँति आशान्वित तो हैं किन्तु इनकी आशा तब तक फलित नहीं हो सकती जब तक देश की जनता गोवंश के महत्व और महत्ता से पुनः परिचित होकर, अपने घर–परिवार में प्रतिष्ठित स्थान इसे नहीं देगी।

अनेक धर्माचार्यों–उपदेशकों ने गो–आश्रयस्थल तो बनाये हैं किन्तु वे अपने श्रद्धालु भक्तों को गोपालन करते हुए इसकी शक्ति–सम्पदा का सदुपयोग करने का उपदेश नहीं देते। महाराज दिलीप को गोसेवा के फल से पुत्र प्राप्ति की कथा सुनाने वाले कथावाचक श्रोताओं को गोपालन

कर उसकी रक्षा का अनुरोध नहीं करते। वे जानते हैं कि ऐसा करने से उनके श्रोताओं की संख्या शून्य हो जायेगी और इस प्रकार उनकी आजीविका समाप्त हो जायेगी तथा जो गोवंश उनके आश्रय स्थल में हैं वह भी भूखा मर जायेगा।

प्रश्न उठता है कि हमारा पूजनीय गोवंश हमारे ही द्वारा उपेक्षित–तिरस्कृत होकर मारा–मारा क्यों फिर रहा है? इसका उत्तर हमारी शिक्षा–दीक्षा का दूषित होना है। ऐसा होने से हमारी बुद्धि दूषित हुई। दूषित बुद्धि के कारण हम विवेकहीन हो गये। इस प्रकार हममें दूरदर्शिता के गुण का ह्रास हो गया। हम वर्तमान के सुख–सुविधाभोग तक सीमित होकर उस महामूर्ख के समान हो गये जिसने सोने के अण्डे देने वाली मुर्गी का पेट फाड़ डाला था। अधिक उपज हेतु गो शक्ति–सम्पदा को उपेक्षित कर ट्रैक्टर से जुताई करके रासायनिक खादों और कीट–खरपतवारनाशी विष का प्रयोग कर खेती करना धरतीमाता का पेट फाड़ना ही नहीं, उसमें विष भरना भी है। अन्नादि में व्याप्त यह विष हम भी खा–पी रहे हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार हम प्रतिवर्ष लगभग सौ ग्राम डी.डी.टी. नामक विष खा जाते हैं। यदि एक बार में इसका चौथाई भी खा लें तो हमारा क्या होगा, यह हमें पता ही है। धीरे–धीरे जो विष हम खाते हैं उससे हमारे शरीर की जीवनी शक्ति का ह्रास होता है। किडनी, लीवर का रोगग्रस्त होना तथा कैंसर और हृदय रोग जैसी दुरूह–घातक बीमारियाँ दूषित अन्न–फल, दुग्ध–जल और वायु के कारण ही अप्रत्याशित रूप से बढ़ती जा रही हैं। यही नहीं गोवंश का तिरस्कार कर हम कोरोना से भी घातक विषाणु पनपने की भूमिका बना रहे हैं।

जब तक कृषि में ट्रैक्टर का उपयोग प्रारम्भ नहीं हुआ था तब तक हमारा गोवंश हमारे जीवन यापन का आधार रहा था। बैलों का उपयोग जुतायी–मड़ायी और सिंचाई में तथा गोमय मूत्रादि का उपयोग खाद के रूप में कृषि में होता था। गुड़–तेल उद्योग और सामान्य परिवहन में भी बैलों का उपयोग होता था। उस समय तक बैल हमारे लिए इतने आदरणीय थे कि बछड़े के जन्म के समय घण्टे–घड़ियाल बजाये जाते थे। ट्रैक्टर और फिर रासायनिक उर्वरकों के बाजार ने हमें कम परिश्रम–अधिक उत्पादन के लोभपाश में बाँधकर परिश्रम विमुख कर दिया।

आज हमारे देश में साक्षर ही नहीं शिक्षितों–उच्च शिक्षितों की संख्या जितनी अधिक बढ़ती जा रही है, हमारे धर्म–संस्कृति और संस्कारों में उसी अनुपात में ह्रास होता जा रहा है। धर्म में आडम्बरों का प्रदूषण, संस्कृति में विलासिताजनित परिश्रम विमुखता का प्रदूषण और संस्कारों में पाश्चात्य कुसंस्कारों का प्रदूषण व्याप्त हो चुका है। जन्म दिवस समारोह का उदाहरण इसका सबसे उपयुक्त प्रमाण है, जिसे पहले दीप प्रज्वलित कर आदिशक्ति का पूजन

कर देवीगीत गाते हुए पास–पड़ोस की महिलाओं द्वारा मनाया जाता था। देवी–पूजन के पश्चात् गोमाता को पूड़ी–हलुआ और गुड़ से बने गुलगुले खिलाकर प्रसाद रूप में बाँटा जाता था। गोमाता का आशीष बालक–बालिकाओं को मिलता था। इससे उनका जीवन कर्मक्षेत्र में सफल होता था। आज गाँवों तक में इस प्रथा का लोप हो चुका है। आज हम जन्मदिन समारोह मोमबत्ती बुझाकर, केक काटकर, अँग्रेजों की भाँति मनाते हैं। गोमाता को पूड़ी–हलुआ गुलगुला तो दूर केक का पहला टुकड़ा तक नहीं देते। देना तो दूर हमें इस दिन उसकी याद तक नहीं रहती। याद तो दूर यदि वह द्वार पर आ भी जाती है तो हम डंडा मारकर भगाते हैं कि कहीं गोबर–मूत्र त्यागकर गन्दगी न कर दे। गोपालकृष्ण का जन्मोत्सव धूम–धाम से मनाने वाले हम लोग उनके उपदेशों को आचरण में लाने वाले कितने श्रद्धालु हैं, यह गोवंश के प्रति हमारे दुर्व्यवहार से स्पष्ट है।

जब तक कृषि में ट्रैक्टर का उपयोग प्रारम्भ नहीं हुआ था तब तक हमारा गोवंश हमारे जीवन यापन का आधार रहा था। बैलों का उपयोग जुतायी–मड़ायी और सिंचाई में तथा गोमय मूत्रादि का उपयोग खाद के रूप में कृषि में होता था। गुड़–तेल उद्योग और सामान्य परिवहन में भी बैलों का उपयोग होता था। उस समय तक बैल हमारे लिए इतने आदरणीय थे कि बछड़े के जन्म के समय घण्टे–घड़ियाल बजाये जाते थे। ट्रैक्टर और फिर रासायनिक उर्वरकों के बाजार ने हमें कम परिश्रम–अधिक उत्पादन के लोभपाश में बाँधकर परिश्रम विमुख

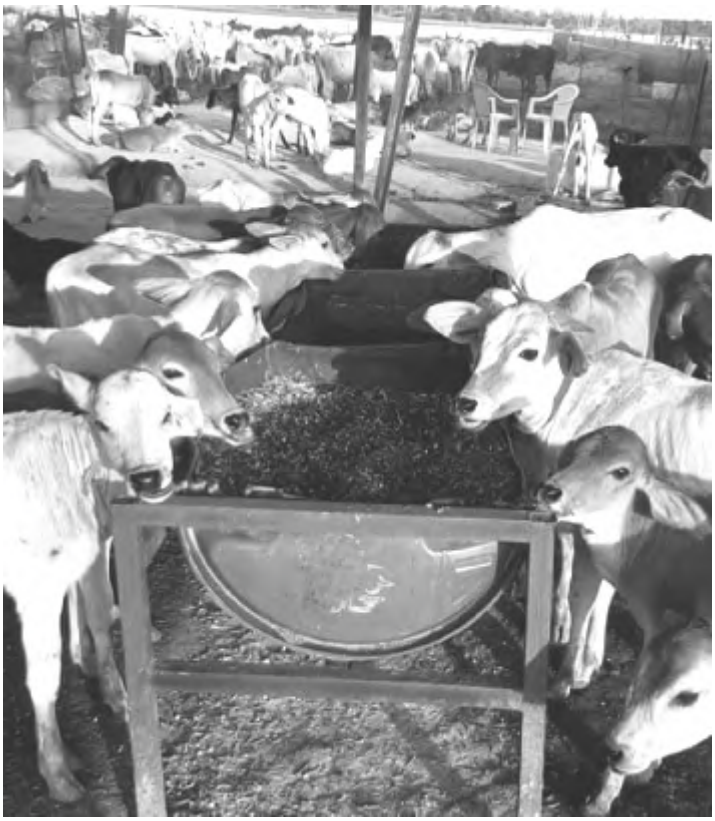

कर दिया। इस प्रकार बैलों की उपयोगिता समाप्त होने से वे उपेक्षित–तिरस्कृत हो गये।

आज हम ही नहीं हमारे धर्माचार्य तक भूल गये हैं कि उत्कृष्ट बुद्धि–विवेक और अति सुविधाजनक शरीर युक्त प्राणी मनुष्य की रचना हेतु वाँछित पारिस्थितिकी गोवंश की रचना के पश्चात् ही निर्मित हो सकी थी। इससे स्पष्ट है कि हमारे अस्तित्व के लिए गोवंश का होना आवश्यक है। जिस दिन हमारा गोवंश नहीं होगा उस दिन हमारा भी अस्तित्व नहीं होगा। मनुष्य और गोवंश की आनुपातिक कमी के कारण होने वाले नूतन गम्भीर रोगों की उत्पत्ति से यह स्पष्ट है। अतः समय रहते हमें चेत जाना चाहिये और गोवंश को अपने परिवार का सम्मानित घटक मानकर उसे आदरपूर्वक प्रतिष्ठित स्थान देकर प्रकृति के कोप से बचना चाहिये।

आज प्रकृति माता अपने सहायक सहचर गोवंश के दारुण दुख से दुखी है। संसार भर में असन्तुलित वर्षा से पहाड़ों का दरकना–बिखरना, नगरों में जल प्लावन, अप्रत्याशित भूकम्प तथा ग्लेसियरों का पिघलते–सिकुड़ते जाना प्रकृति के कोप का प्रमाण नहीं तो क्या है। यदि हम न चेते तो परिणाम विनाशकारी ही होंगे। यह ध्रुव सत्य है कि गोसेवा का फल मनुष्य को चारित्रिक विकास के रूप में मिलता है। कहावत है कि चरित्र मनुष्य का सर्वस्व है।

चलभाष – 8765805322

पूजा पाराशर (स्वतंत्र लेखिका)

मोक्ष स्थल 'धेनुपुरीश्वर' मंदिर

बिना उद्देश्य के कभी भी कुछ नहीं होता है; अप्रिय होने के पीछे भी स्वयं व समाज के उद्धार का रहस्य छुपा होता है; यही ईश्वर की लीला है। इन सब बातों का संज्ञान व ज्ञान बहुत बाद में होता है और जब तक व्यक्ति अपना जीवन क्लेश में ही व्यतीत करता रहता है। अतः जीवन के प्रत्येक काल व हर परिस्थिति में, स्वयं और ईश्वर के प्रति विश्वास बनाए रखते हुए प्रसन्नचित्त होकर जीवन यापन करना ही जीवन की सार्थकता है।

तमिलनाडु, चेन्नई में तांबरम के निकट माड़म्बाक्कम स्थान में **धेनुपुरीश्वर मंदिर** स्थित है। इस मंदिर का पूर्ण निर्माण 954 – 971 ई. में राजा चोल द्वारा करवाया गया। यहाँ भगवान शिव को धेनुपुरीश्वर कहा जाता है। 'धेनु' अर्थात् गाय, यहाँ भगवान शिव ने गोमाता को श्राप मुक्त किया, अतः यहाँ के ईश्वर को धेनुपुरीश्वर कहा गया। शहर के बीचों–बीच अपनी भव्यता व दिव्यता बनाए रखे यह धेनुपुरीश्वर मंदिर आस्था, श्रद्धा और संस्कृति का प्रतीक है। माना जाता है कि इस स्थान पर गोमाता के रूप में कपिल मुनि को मोक्ष प्राप्त हुआ था।

पौराणिक कथा के अनुसार, जब राजा सगर ने अश्वमेध यज्ञ किया और घोड़े को किसी के द्वारा बिना पकड़े विजय होकर लौटने के लिए छोड़ा गया तब इंद्र ने उस घोड़े को पकड़कर कपिल मुनि के आश्रम में बाँध दिया। कपिल मुनि उस समय तपस्या में लीन थे। सगर के बेटे ने घोड़े को जब मुनि के आश्रम में बँधा देखा तो संदेह हुआ कि उन्होंने उसे पकड़ लिया है, अतः वह मुनि को परेशान करने लगा। मुनि ने अपनी तपस्या में विघ्न पड़ने और इस तरह के व्यवहार के लिए उसे श्राप दे दिया। यह श्राप सगर की आने वाली पीढ़ियों को प्रभावित करता रहा। अगली पीढ़ी के राजा भगीरथ, ऋषि वशिष्ठ के आदेशानुसार गंगा को पृथ्वी पर लाए और अपने पूर्वजों को इस श्राप से मुक्त करा कर उनका उद्धार किया।

कपिल मुनि को स्वयं के द्वारा दिए गए श्राप के लिए पश्चाताप हुआ। अतः इसका प्रायश्चित करने एवं मोक्ष प्राप्ति हेतु भगवान शिव की आराधना प्रारंभ कर दी। कपिल मुनि जब अपने बाएँ हाथ में शिवलिंग लेकर दाएँ हाथ से फूल चढ़ा रहे थे तभी शिवजी ने प्रकट होकर उनसे पूछा कि पूजा करने की यह कौन सी विधि है? कपिल मुनि ने कहा कि पवित्र भगवान को

अशुद्ध धरती पर रखना उन्हें पसंद नहीं है। भगवान शिव ने कहा इस धरती पर मेरे कई निवास स्थान हैं और ऐसा कोई स्थान नहीं जो मुझे पसंद न हो। उन्होंने कपिल मुनि से कहा कि जिस धरती को तुम अशुद्ध बता रहे हो उसी पर तुम्हें गाय रूप में जन्म लेना होगा और मोक्ष प्राप्ति हेतु स्वयंभू लिंग की पूजा करनी होगी। श्रापित कपिल मुनि, गाय का रूप धारण कर पृथ्वी लोक पर विचरण करने लगी और एक गुप्त स्थान पर शिवलिंग की पूजा करने लगी। वह गाय प्रतिदिन शिवलिंग पर दूध चढ़ाती। गोपालक ने उसे जब ऐसा करते देखा तो उस पर पत्थर फेंकने लगा। वह उस पीड़ा को सहती रही, परंतु अभिषेक करना नहीं छोड़ा। पत्थरों से घायल पीड़ा सहन न होने के कारण उसका पैर अचानक जमीन पर लग गया और वहाँ से खून निकलने लगा। यह सब देखकर गोपालक को विश्वास नहीं हुआ। वह घबरा गया और गाँव वालों को बुलाने चला गया। शिवजी वहाँ प्रकट हुए और धेनु उनमें समाहित हो गई। इस प्रकार गोमाता के रूप में कपिल मुनि को मोक्ष प्राप्त हुआ।

गाँव के सभी लोगों ने जब उस भूमि को देखा तो वहाँ से एक शिवलिंग निकला जिससे खून निकल रहा था। इस स्वयंभू पर गाय के पैर के चिह्न भी थे। अतः स्वयंभू लिंग को धेनुपुरीश्वर के नाम से जाना गया। जब लोगों ने राजा चोल को इस घटना के बारे में बताया तब राजा ने इस मंदिर को बनवाने की व्यवस्था की। यह भी माना जाता है कि राजा ने इस स्थल को स्वप्न में भी देखा था। "मंदिर का निर्माण चोल राजा, परांतक चोल द्वितीय, राजा चोल प्रथम के पिता के शासनकाल के दौरान किया गया, जिन्होंने तंजावुर में प्रसिद्ध बृहदेश्वर मंदिर का निर्माण कराया।"

यहाँ शिवलिंग बहुत छोटे आकार में है और उस पर आज भी गोमाता के पैरों के चिह्न हैं। यदि पुजारी से कहा जाए तो वह अवश्य उसे दिखाएँगे।

इसे कपिलमुनि की समाधिस्थल भी माना जाता है। धेनुपुरीश्वर की पत्नी अर्थात् **देवी माँ धेनुकंबल** के नाम से पूजी जाती हैं। विशेष तिथि व त्यौहारों पर मंदिर में बहुत ही भीड़ उमड़ती है। भक्तों का मानना है कि यहाँ सभी दोषों का निवारण होता है और मन को शांति मिलती है, धेनुपुरीश्वर सभी मनोकामनाएँ पूर्ण करने वाले हैं। 15वीं सदी के महान संत व तमिल कवि अरुणगिरिनादर ने भी इस स्थल की महिमा का बखान किया है।

"इस दिव्य मंदिर को आकर्षित करने वाली एक और कहानी है कि किस प्रकार इस मंदिर को खंडहरों से खोजा गया।

कांची महापेरियवा श्रीचंद्रशेखरेंद्र सरस्वती स्वामी से एक भक्त ने अपने नए निर्मित गृह के लिए आशीर्वाद माँगा। महापेरियवा ने उसे आशीर्वाद देते हुए कहा कि माड़म्बाक्कम नामक एक पास के गाँव में एक पुराना शिव मंदिर खंडहर में पड़ा हुआ है। उन दिनों वहाँ सेलयूर नामक उपनगर था और किसी ने मेड़म्बाक्कम के बारे में नहीं सुना था। वह भक्त कांचीमहापेरियवा के कहे अनुसार कुछ लोगों के साथ मंदिर की खोज में निकल पड़ा। उन्होंने उस क्षेत्र के आस–पास की झाड़ियों को साफ किया और चोल वास्तुकला में एक आश्चर्यजनक मंदिर पाया। उन्होंने इसका जीर्णोद्धार किया, कुंभाभिषेक किया और दैनिक पूजा प्रारंभ कर दी। आज यह दिव्य मंदिर हजारों लोगों की आस्था का प्रतीक बनकर आकर्षित कर रहा है।"

गावोऽधिकास्तपस्विभ्यो यस्मात्
सर्वेभ्य एव च
तस्मान्महेश्वरो
देवस्तपस्ताभिः सहास्थितः।

(महा०अनु० ६६।३७–३८)

अर्थात् गायें तपस्वियों से भी श्रेष्ठ हैं और अन्य सभी से भी श्रेष्ठ हैं। इसलिए भगवान् शिव भी गोओं के साथ रहकर ही तपस्या करते हैं।

वैद्य नंदिनी भोजराज (एम.डी., आयुर्वेद)

पक्षाघात रक्षक पंचगव्य चिकित्सा

सावन–भादों के महिना हैं। सर्वदूर हरियाली छायी है। यह 'वात' दोष का प्रकोप माह–ऋतु है। निसर्गतः पर्यावरण में वायु की अधिक हलचल दिखती है। एक जगह से बारिश भरे बादल दूसरी तरफ ले जाए जाते हैं। ऐसे ही रिमझिम बारिश का दिन था। खेती संबंधित कार्य करने वाले अधिकतर गीले होते हैं। कभी–कभी भीगे कपडों में ज्यादा वक्त निकल जाता है। शरीर ठंडा पड़ता है। गीले कपडे शरीर पर ही सूख जाते हैं। ऐसे में वायु का शीत गुण अधिक बढ़ जाता है। कभी–कभी शरीर में जकड़ाहट बढ़ने लगती है।

एक रोगी की उम्र लगभग 65 साल है। सालों से मधुमेह से पीड़ित। अतः अब शरीर पर मधुमेह का बुरा असर भी होना शुरू हो चुका है। एक भ्रमणध्वनी आती है। रूग्ण बताता है कि आज वह दिन में दो बार गीला हुआ। अतः अधिक समय गीले कपड़े पहनकर वह अधिक समय वैसे ही रहा। नित्य बारिश में भीगने के उपरान्त गरम पानी से सिर से नहाना तय था। परंतु आज शायद कुछ अलग लग रहा था, लेकिन गरम पानी से नहाना नहीं हुआ। लगभग आधे घंटे के पश्चात बाया हाथ एवम् पॉव में झुनझुनी आना शुरू हुई थी। धीरे–धीरे एक जगह से शुरूवात हुई थी मगर अब संपूर्ण बायें हाथ एवम् पॉव में चीटी चलने की प्रतीति हुई। ध्यान में आ रहा था की यह पक्षाघात की शुरूवात हो सकती है।

ऐसी अवस्था में आयुर्वेदिक पद्धति के अनुसार भी वातशामक या वातानुलोमक यानी प्रकुपित वायु को शांत करने वाली औषधी तुरंत दी जाती है। तेल एवम् घी के स्नेह का उपयोग वातानुलोमन के लिए किया जाता है।

पंचगव्य की औषधियाँ घर में ही थीं। हिंग्वाद्य घृत, कामधेनु हरडे चूर्ण, लघुसूतशेखर रस घर में थे। इन सभी औषधियों को यथोचित मात्रा में गरम पानी के साथ तुरंत सेवन कराया गया। यहां समय का ध्यान रखना अतिआवश्यक है। हमेशा की बताई मात्रा से यहॉ ज्यादा मात्रा की एक साथ आवश्यकता होती है। लेकिन देश, काल, रूग्णबल, व्याधि लक्षण, आदि का विचार कर चिकित्सक को यथोचित सुझाव देने की आवश्यकता होती है। अब उन्हें मेडिकल अतिदक्षता विभाग में तुरंत ले गए। औषधि सेवन के पंद्रह–बीस मिनिट बाद धीरे–धीरे लक्षणों में कमी आने लगी। अत्यधिक चिकित्सा मिलने तक लगभग साठ से सत्तर प्रतिशत लक्षणों में कमी आई थी। रुग्ण को भरती कर तुरंत

ही सभी जाँचें की गईं। ECG ठीक था। रक्तचाप में वृद्धि दिख रही थी। तुरंत ही मस्तिष्क का Scan भी किया गया। रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से धीरे–धीरे छोटा–सा Clot तैयार होकर रक्ताभिसरण के मार्ग में रुकावट तैयार करता ध्यान में आया। उनका चलते समय थोड़ा–सा लड़खड़ाना भी शुरू हो रहा था। सभी औषधि योजना तुरंत शुरू हुई। आगे शरीर किस तरह से औषधि का साथ दे रहा है, देखना था। अतः भर्ती किया गया। रक्तगत शर्करा भी थोड़ी बढ़ी हुई ध्यान में आयी थी।

घर में लक्षणों की शुरुवात धीरे–धीरे बढ़ रही थी। लेकिन हिंग्वाद्य घृत, कामधेनु हरड़े चूर्ण, गरम पानी के साथ अजवायन, लघुसूतशेखर रस आदि लेने के बाद धीरे–धीरे कमी आना शुरू हुई। डॉक्टर्स ने भी माना था कि पक्षाघात की शुरुवात तो हो रही थी, लेकिन जल्द–से–जल्द लक्षणों की तरफ ध्यान देकर उपाय योजना मिलने से लक्षण तो तुरन्त ही अत्यल्प स्थिति में रहे। वातप्रकोप यह अवस्था कभी कभी बहत्तर घंटों में पुनः बढ़ सकती है। एक बार शरीर में दवाई देने से ठीक हो जाएगा, ऐसा जरूरी नहीं। अतः ऐसी अवस्था में तुरन्त ही उपाय योजना लागु करना अत्यंत आवश्यक है।

इसीलिए वर्षाऋतु में उपरोक्त वर्णित औषधियों का सेवन कुछ भी लक्षण दिखने के पूर्व ही शुरू होना अत्यावश्यक है। उसमें भी पंचकर्म अगर हम करते हैं तब अधिक लाभ प्राप्त होता है। साथ ही की गई चिकित्सा का असर भी ज्यादा दिन रहता है। अतः ये आयुर्वेद की विशेषता है कि व्याधि लक्षण ज्यादा बढ़ने के पूर्व ही हम चिकित्सा शुरू कर सकते हैं। कुछ लोगों की सावधानी के कारण पक्षाघात जैसी व्याधि का भयंकर रूप धारण करने के पूर्व ही उससे बचना बहुत बड़ी उपलब्धि है। आयुर्वेद में ऋतुचर्या और उसका परहेज बहुत ही अच्छा वर्णित प्राप्त होता है। अगर हम उसका व्यवस्थित पालन करें तब निश्चित ही लाभ प्राप्त होता है। अधिक जानकारी प्राप्त करने हेतु गोविज्ञान अनुसंधान केंद्र, देवलापार, नागपुर द्वारा संचालित महल एवम् 146 शिवाजीनगर, नागपुर स्थित पंचकर्म केन्द्र से मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं।

ईश्वर दर्शन

धर्मग्रंथों में देवता और दानव, दोनों का उल्लेख है। अधिकांशतः लोग अपने जीवन को खुशहाल बनाने के लिए देवी–देवताओं की पूजा करते हैं, व्रत–उपवास रखते हैं एवं यज्ञ–अनुष्ठान आदि भी करते रहते हैं। कभी–कभी बहुत से लोग धर्म क्षेत्र के विशेषज्ञों, महात्माओं से यह इच्छा भी प्रकट करते हैं कि क्या भगवान का साक्षात दर्शन किया जा सकता है? इस बारे में अलग–अलग तरह के आश्वासन दिए जाते हैं। बोध–कथाओं के जरिये धर्मगुरु लोगों को अलग–अलग तरीके से समझाते और संतुष्ट करते हैं।

वैसे देवी–देवता के साक्षात दर्शन हो सकते हैं, लेकिन भगवान विष्णु, महादेव, मां काली यदि सच में पूजा–पाठ के दौरान आ जाएं तो उपासक खुद ही थर–थर कांपने लगेगा। भगवान के लिए किए गए कार्यों को अपने जीवन में अपना कर खुद भगवान का दर्जा हासिल करना धर्मग्रंथों का मूल उद्देश्य है। श्रीराम कथा में प्रसंग है कि भगवान श्रीराम जन्म लेने के बाद जैसे ही अपना सुदर्शन चक्रधारी चतुर्भुजी रूप माता कौशल्या को दिखाते हैं तो वह घबरा – सी गईं और तत्काल उनसे शिशु रूप धारण करने की प्रार्थना करने लगीं। भगवान श्रीराम धर्मग्रंथों में वर्णित अनेक राजाओं की तरह ही सामान्य राजा ही रह जाते यदि वह वनवास के लिए न जाते। प्रायः यह कहा जाता है, **'श्रीराम वन जाकर बन गए।'**

वस्तुतः कोई भी अपने कार्यों से भगवान बन जाता है और दैत्य भी बन जाता है। गौतम बुद्ध ने मानवता की सेवा करने के लिए ऐश्वर्यपूर्ण राजमहल छोड़ दिया। इसके बाद अपने आचरण से न जाने कितने दैत्य प्रवृत्ति के लोगों को देव– श्रेणी में खड़ा कर दिया। कोई भी व्यक्ति सड़क पर घायल व्यक्ति को जब अस्पताल पहुंचाकर उसका जीवन बचाता है तब उस क्षण वह जीवनदाता की श्रेणी में तो आ ही जाता है। इसलिए मानवता की सेवा कर देवस्वरूप हासिल करना ज्यादा सरल और सहज मार्ग है।

– सलिल पांडेय

जय गोमाता

भारत की सर्वांगीण समृद्धि का गोरक्षा ही है मूल मंत्र

-राजीव गुप्ता (आईएएस)

हे गोमाता तुम करती हो सारे जग का पोषण,
दुर्बुद्धि दुष्ट मनुष्य ने किया तुम्हारा ही शोषण।
गोमाता हैं परमेश्वर की अनुपम कृति विलक्षण,
आओ हम मिलकर करें गोसंवर्धन–गोसंरक्षण।।

गाय के पृष्ठ भाग में ब्रह्मा जी, गले में श्री नारायण,
मुख में शिवजी, रोम–रोम में ऋषि महर्षि–देवगण।
अष्ट ऐश्वर्यों सहित माता लक्ष्मी गोबर में करें रमण,
वहाँ देवता वास हैं करते, जहाँ गाय के पड़ें चरण।।

सर्वदेवमयी गोमाता ही चलती फिरती देवालय,
साक्षात् प्रेम की प्रतिमूर्ति सबको देतीं वात्सल्य।
अमृत तुल्य दुग्ध दही घी गोबर गोमूत्र–पंचगव्य
से तन मन धन सँवर जाता, जीवन हो जाता धन्य।।

तुम्हारा वत्स हल को खींचे और करे भारवाहन,
गोबर – गोमूत्र से बने खाद कीटनाशक पावन।
गोवंश से जैविक कृषि, रहित हानिकारक रसायन,
गोवंश आधारित अर्थव्यवस्था रोके ग्राम से पलायन।।

ट्रैक्टर और डीजल वाहनों ने किया बैलों को बेकार,
दूषित खाद्य पदार्थों की पड़ी जन स्वास्थ्य पर मार।
न केवल तन रुग्ण हुए लोगों के मनों में भरे विकार,
भौतिकता की आँधी में उड़ गए सभी शुभ संस्कार।।

पहले गोवंश से पृथक हुए, अब टूटे जा रहे परिवार,
वृद्ध माता–पिता भी बहुतों को अब लगने लगे भार।
प्रदूषित शहरों में रहते नहीं मिलता समुचित रोजगार,
व्यसन छल–कपट अपराध की होती जा रही भरमार।।

गोचर भूमियों पर हुए कब्जे, नहीं किया चारा विकास,
खाद्यान्न सड़ता रहा, नहीं मिटी गोवंश की भूख–प्यास।
रासायनिक कृषि से भूमि का ऊसर बनकर हुआ ह्रास,
गोवंश सड़कों व कत्लखानों में बन रहा काल का ग्रास।।

करो गोबर, गोमूत्र व बैलों की कर्षण शक्ति का उपयोग,
जैविक कृषि को अपनाओ व गो आधारित कुटीर उद्योग।
पंचगव्य से निर्मित औषधियों व उत्पादों का करो प्रयोग,
उत्तम स्वास्थ्य, स्वच्छ पर्यावरण का होगा सुलभ संयोग।।

महँगे निवेशों के बिना उच्चतर गुणवत्ता का उत्पादन
मिलेगा, मनुष्य एवं गोवंश दोनों को पौष्टिक भोजन।
अर्थव्यवस्था सुधरेगी युवा शक्ति का होगा सुनियोजन,
प्रेम शांति सदाचार उच्च विचार करेंगे सार्थक जीवन।।

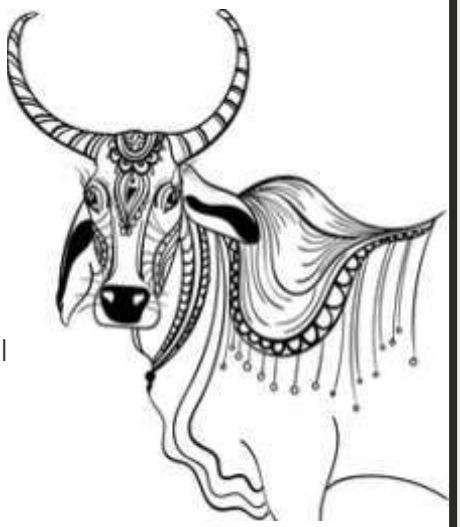

चिकित्सा अपराध व्यसन निवारण व्यय में होगी बचत,
मनुष्य के बल बुद्धि तेज ओज आनंद की होगी बढ़त।
बाह्य व आंतरिक विकास, दोनों ही हो जायेंगे प्रशस्त,
तब ही तो स्थापित होगा महापुरुषों की दृष्टि का भारत।।

विप्र धेनु सुर संत हित लिया प्रभु श्रीराम ने अवतार,
श्री राम मंदिर निर्माण का स्वप्न भी हो गया साकार।
गोसंवर्धन गोसंरक्षण कार्य का भी हो व्यापक विस्तार,
यही सर्वोत्तम रामकाज है, समझे समाज व सरकार।।

गोसेवा ही परमात्मा की कृपा प्राप्ति का अद्वितीय यंत्र,
श्रीकृष्ण की गोमाता पर नहीं चलेगा कलि का षड्यंत्र।
जागो भारत के ऋषि मुनियो, जागो जनता व राजतंत्र,
भारत की सर्वांगीण समृद्धि का गोरक्षा ही है मूल मंत्र।।

विदेशी गायों के दूध से डायबिटीज!

कृपया पूरा लेख बिना पढ़े ऐसी कोई प्रतिक्रिया न दें कि अरे तुमने गाय में भी स्वदेशी–विदेशी कर दिया। अरे गाय तो माँ होती है तुमने माँ को भी अच्छी–बुरी कर दिया। लेकिन मित्रो सच यही है की ये जर्सी गाय नहीं, ये पूतना है! पूतना की कहानी तो आपने सुनी होगी। भगवान कृष्ण को दूध पिलाकर मारने आई थी, वही है ये जर्सी गाय!!

सबसे पहले आप यह जान लीजिये की स्वदेशी गाय और विदेशी जर्सी गाय की पहचान क्या है? देशी और विदेशी गाय को पहचानने की जो बड़ी निशानी है वो ये की देशी गाय की पीठ पर मोटा–सा कुकुद (हम्प) होता है जबकि जर्सी गाय की पीठ समतल होती है। आपको जानकर हैरानी होगी दुनिया में भारत को छोड़ जर्सी गाय का दूध कोई नहीं पीता। जर्सी गायें सबसे ज्यादा डैनमार्क, न्यूजीलैंड, आदि देशों में पायी जाती हैं। डैनमार्क में तो कुल लोगों की आबादी से ज्यादा गायें हैं। और आपको ये जानकर हैरानी होगी की डैनमार्क वाले दूध ही नहीं पीते। क्यों नही पीते? क्योंकि कैंसर होने की संभावना है, घुटनों का दर्द होना तो आम बात है। मधुमेह (शुगर) होने का बहुत बड़ा कारण है इस जर्सी गाय का दूध। डैनमार्क वाले चाय भी बिना दूध की पीते हैं। डैनमार्क की सरकार तो दूध ज्यादा होने पर समुद्र में फिकवा देती है। वहाँ एक लाइन बहुत प्रचलित है। Milk is a white poison और जैसा की आप जानते हैं भारत में 36000 कत्लखानों में हर साल 2 करोड़ गायें काटी जाती हैं और जो 72 लाख मीट्रिक टन मांस का उत्पादन होता है वो सबसे ज्यादा अमेरिका और उसके बाद यूरोप और फिर अरब देशों में भेजा जाता है। आपके मन में सवाल आएगा कि ये अमेरिका वाले अपने देश की गाय का मांस क्यों नही खाते? दरअसल बात ये है कि यूरोप और अमेरिका की जो गायें हैं उनको बहुत गंभीर

बीमारियाँ हैं और उनमें एक बीमारी का नाम है Mad Cow Disease। इस बीमारी से गाय के सींघ और पैरों में पस पड जाती है और घाव हो जाते हैं। सामान्य रूप से जर्सी गायों को ये गंभीर बीमारी रहती है। अब इस बीमारी वाली गाय का कोई मांस अगर खाये तो उसको इससे भी ज्यादा गंभीर बीमारियाँ हो सकती हैं। इसलिए यूरोप और अमेरिका के लोग आजकल हमारे देश की गाय का मांस खाते हैं, भारत की गाय के मांस की वहां ज्यादा डिमांड है। क्योंकि भारत की गायों को ये बीमारी नहीं होती है। आपको जानकर हैरानी होगी जर्सी गाय को ये बीमारी इसलिए होती है क्योंकि उसको भी मांसाहारी भोजन करवाया जाता है ताकि उनके शरीर में मांस और ज्यादा बढ़े। यूरोप और अमेरिका के लोग गाय को मांस के लिए पालते हैं। मांस उनके लिए प्राथमिक है, दूध पीने की वहाँ कोई परम्परा नहीं है, वो दूध पीना अधिक पसंद नहीं करते। तो जर्सी गाय को उन्होंने पिछले 50 साल में इतना मोटा बना दिया है कि वे भैंस से भी ज्यादा बदतर हो गई हैं। यूरोप की गाय की जो मूल प्रजातियाँ हैं holstein, friesian, jarsi ये बिल्कुल विचित्र किस्म की हैं, उनमें गाय का कोई भी गुण नहीं बचा है।

उदाहरण के लिए जर्सी गाय को अपने बच्चों से कोई लगाव नहीं होता और जर्सी गाय अपने बच्चे को कभी पहचानती भी नहीं। कई बार ऐसा होता है कि जर्सी गाय का बच्चा किसी दूसरी जर्सी गाय के साथ चला जाए उसको कोई तकलीफ नहीं। लेकिन जो भारत की देशी गायें हैं वो अपने बच्चे से इतना प्रेम करती हैं, इतना लगाव रखती हैं कि अगर उसके बच्चे को

किसी ने बुरी नजर से भी देखा तो वे उसे मार डालने के लिए तैयार हो जाती हैं। देशी गाय की जो सबसे बड़ी विशेषता है वो ये की वह लाखों की भीड़ में अपने बच्चे को पहचान लेती हैं और लाखों की भीड़ में वो बच्चा अपनी माँ को पहचान लेता है। जर्सी गाय कभी भी अधिक पैदल नहीं चल पाती। चलाने की कोशिश करो तो बैठ जाती है। जबकि भारतीय गाय की ये विशेषता है कि उसे कितने भी ऊँचे पहाड़ पर चढ़ा दो वो चढ़ती चली जाएगी।

कभी आप हिमालय पर्वत की परिक्रमा करें, जितनी ऊंचाई तक मनुष्य जा सकता है उतनी ही ऊंचाई तक आपको देशी गाय देखने को मिलेगी। आप ऋषिकेश, बद्रीनाथ, आदि जाएं, जितनी ऊंचाई पर जाएं 8000–9000 फिट तक आपको देशी गाय देखने को मिलेगी। जर्सी गाय को 10 फिट ऊपर चढ़ने से वह तकलीफ में आ जाती है। जर्सी गाय का पूरा स्वभाव भैंस जैसा है। बहुत बार ऐसा होता है जर्सी गाय सड़क पर बैठ जाये और पीछे से लोग होर्न बजा–बजा कर पागल हो जाते हैं लेकिन वो नहीं हटती, क्योंकि हटने के लिए जो आई. क्यू. चाहिए वो उसमें नही है।

सामान्य रूप से ये जो जर्सी गाय उसके बारे में यूरोप के लोग ऐसा मानते हैं कि इसको विकसित किया गया है। भगवान ने गाय सिर्फ भारत को दी है। और आपको सुन कर हैरानी होगी ये जितनी भी जर्सी गायें हैं यूरोप और अमेरिका में, उनका जो वंश बढ़ाया गया है वो सब Artificial Insemination से बढ़ाया गया और आप सब जानते हैं Artificial Insemination में ये गुंजाइश है कि किसी भी जानवर का जीन चाहे घोड़े का, या चाहे सूअर का उसमें डाल सकते हैं। तो इसे सूअर से विकसित किया गया है और Artificial Insemination से भी उसको गर्भवती बनाया जाता है। ये उनके वहाँ पिछले 50 साल से चल रहा है। यूरोप और अमेरिका के जो भोजन विशेषज्ञ (Nutrition expert) हैं, उनका कहना है कि अगर जर्सी गाय के मांस का भोजन

करें तो 15 से 20 साल में कैंसर होने की संभावना हो जाती है। घुटनों का दर्द तो तुरंत होता है। और ऐसे 48 रोग होते हैं, इसलिए उनके देश में आजकल एक अभियान चल रहा है कि अपनी गाय का मांस कम खाओ और भारत की सुरक्षित गाय का मांस अधिक खाओ। इसीलिए यूरोपियन कमीशन ने भारत सरकार के साथ समझौता कर रखा है और हर साल भारत से 72 लाख मीट्रिक टन मांस का निर्यात होता है जिसके लिए 36000 कत्लखाने इस देश में चल रहे हैं। तो मित्रो उनके देश के लोग न तो आजकल अपनी गाय का मांस खा रहे हैं और न ही दूध पी रहे हैं। और हमारे देश के नेता इतने हरामखोर हैं कि एक तरफ तो अपनी गाय का कत्ल करवा रहे हैं और दूसरी तरफ उनकी सूअर जैसी जर्सी गाय को भारत में लाकर हमें बर्बाद करने में लगे हैं। पंजाब और गुजरात में सबसे ज्यादा जर्सी गायें हैं, और एक गंभीर बात आपको सुन कर हैरानी होगी भारत की बहुत–सी घी बेचने वाली कंपनियां बाहर से जर्सी गाय का दूध **इम्पोर्ट** करती हैं।

दूध को दो श्रेणियों में बांटा गया है A1 और A2। A1 जर्सी का तथा A2 भारतीय देशी गाय का होता है। तो होता ये है कि इन कंपनियों को अधिक से अधिक रोज घी बनाना है, अब इतनी गायों को संभालना, उनका पालन–पोषण करना, वो सब तो इनसे होता नहीं और न ही इतनी गायें ये फैक्ट्री में रख सकते हैं। तो ये लोग क्या करते हैं – डैनमार्क आदि देशों से A1 दूध (जर्सी गाय) का मँगवाते हैं पाउडर (सूखा दूध) के रूप में। उनसे घी बनाकर हम सबको बेच रहे हैं और हम सबकी मजबूरी ये है कि आप इनके खिलाफ कुछ कर नहीं सकते, क्योंकि भारत में कोई ऐसा कानून नहीं बना जो ये कहता हैं कि जर्सी गाय का दूध A1 नहीं पीना चाहिए। अगर कानून होगा तो ही आप कुछ करोगे न? यहाँ A1 को जाँचने की लैब तक नहीं है। तो आप सबसे निवेदन है कि आप देशी गाय का ही दूध पियें, उसी के गोबर से खाद बनाएं और खेती करें। देशी गाय की पहचान हमने ऊपर बताई थी कि उसकी पीठ पर मोटा–सा कुकुद होता है। दरअसल ये कुकुद ही सूर्य से कुछ विशेष प्रकार की तरंगे लेता है वही उसके दूध, मूत्र

आपको जानकर हैरानी होगी जर्सी गाय को ये बीमारी इसलिए होती है क्योंकि उसको भी मांसाहारी भोजन करवाया जाता है ताकि उनके शरीर में मांस और ज्यादा बढ़े। यूरोप और अमेरिका के लोग गाय को मांस के लिए पालते हैं। मांस उनके लिए प्राथमिक है, दूध पीने की वहाँ कोई परम्परा नहीं है, वो दूध पीना अधिक पसंद नहीं करते।

और गोबर को पवित्र व विशेष बनाती हैं। गोमाता सबसे पहले समुन्द्र मंथन से निकली थी जिसे कामधेनु कहते हैं। गोमाता को वरदान है कि उसके शरीर से निकली कोई भी वस्तु बेकार नहीं जाएगी। दूध हम पी लेते हैं, मूत्र से औषधियां बनती हैं, गोबर से खेती होती है। और गोबर गैस से गाड़ियां चलती हैं। सूर्य से जो किरणें इसके शरीर में आती हैं उसी कारण इसके दूध में स्वर्ण गुण आता है और इसके दूध का रंग स्वर्ण (सोने) जैसा होता है और गाय के दूध से कोलोस्ट्रोल बिलकुल भी नहीं बढ़ता है।

आज से ही देशी गाय का दूध पियें। अपने दूध वाले भाई से पूछें कि वह किस गाय का दूध लाकर दे रहा है। वैसे बहुत से दूध वालों को देशी–विदेशी गाय का अंतर नहीं पता होगा, आप बता दीजिये। दूध देशी गाय का ही पिंये और घी भी देशी गाय का ही खाएं।, गाय के घी के बारे में अधिक जानकारी के लिए यह जान लीजिये। गाय का घी मुख्य रूप से 2 तरह का है– एक खाने वाला घी है और दूसरा पंचगव्य घी नाक में डालकर इलाज करने वाला। (पंचगव्य घी की लागत अधिक होती है क्योंकि 2–2 बूंद नाक में या नाभि में डालने से 48 रोग ठीक होते हैं, (8 से 10 हजार रुपये लीटर बिकता है)। इसको असली विधि जो आयुर्वेद में लिखी है उसी ढंग से बनाने वाले भारत में नाम मात्र के लोग हैं।

आयुर्वेद में खाने वाला गाय के दूध का घी निकालने की जो विधि लिखी है उस विधि से आप घी निकालें तो आपको 1200 से 2000 रुपये किलो पड़ेगा। क्योंकि 1 किलो घी के लिए 25 से 30 लीटर दूध लग जाता है। महंगा होने का कारण यह भी है कि देशी गायों की संख्या कम होती जा रही है। वैसे तो यही घी सबसे बढ़िया है लेकिन एक दूसरे ढंग से भी आजकल निकालने लग गए हैं। जिससे दूध से सीधा क्रीम निकालकर घी बनाया जाता है। अब समस्या यह है कि लगभग सभी कंपनियाँ या तो भैंस का घी बेचती हैं या गाय का घी बोलकर जर्सी का बेच रही हैं।

आपको अगर घी खाना ही है तो भारत की सबसे बड़ी गौशाला व विश्व की भी सबसे बड़ी गौशाला है राजस्थान में, उसका नाम है **पथमेड़ा गौशाला**। उनका घी खा सकते हैं। पथमेड़ा गौशाला में दो–तीन लाख देशी गायें हैं। इनके घी की सबसे बड़ी विशेषता है कि ये देशी गाय का घी ही बेचते हैं। बस अंतर यह है कि यह क्रीम वाले ढंग से निकाला व बनाया जाता है लेकिन फिर भी भैंस और जर्सी गाय के घी की तुलना में बहुत–बहुत बढ़िया है, लेकिन इसका मूल्य साधारण घी से थोड़ा ज्यादा है। भगवान की अगर आप पर आर्थिक रूप से ज्यादा कृपा है तो आप देशी गाय का ही घी खाएं। कम खा लीजिये लेकिन जर्सी का कभी मत खाएं और दूध भी हमेशा देशी गाय का ही पियें।

और अंत में एक और बात जान लीजिये, अब इन विदेशी लोगों को भारत की गाय की महत्ता का एहसास होने लगा है। आपको जानकर हैरानी होगी कि भारतीय नस्ल की गायों को जर्मनी वाले अपने देश में ले जाकर उनका वंश आगे बढ़ाकर 2 लाख डॉलर लगभग 1 करोड़ की एक गाय बेच रहे हैं। तो मित्रो सबसे पहला कार्य अगर आप देश के लिए कुछ करना चाहते हैं तो गोरक्षा करें। गोरक्षा ही भारत रक्षा है।

सुधा प्रधान (स्वतंत्र लेखिका)

प्राचीनकाल से ही ग्रामीण क्षेत्रों में इसे संपन्नता के प्रतीक के तौर पर देखा गया है। घर में गायों की संख्या किसी भी गांव में उस घर के स्वामी की समृद्धता की सूचक होती थी। आधुनिक समाज में गाय के आर्थिक महत्व को कम आंका जा रहा है, जबकि देश में उपलब्ध गोधन की विशाल संख्या ग्रामीण भारत की अर्थव्यवस्था की रफ्तार को नई दिशा प्रदान कर सकती है।

आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण कारक है गोधन

यदि हमारे धर्मग्रंथों ने गाय को विश्व की माता कहा है तो इस आस्था का केवल धार्मिक पक्ष ही नहीं है, बल्कि देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में भी गाय का योगदान बेहद महत्वपूर्ण रहा है। गांवों में बसे करोड़ों लोगों के जीवन यापन में गौ–उत्पाद प्रमुख भूमिका निभा रहे हैं। यही वजह है कि हमारे देश में प्राचीन काल से ही इसे गोधन के नाम से पुकारा गया है। इतना ही नहीं वैज्ञानिक अनुसंधानों में भी गाय को पर्यावरण हितैषी पाया गया है। जिस प्रकार पीपल का वृक्ष और तुलसी का पौधा ऑक्सीजन छोड़ते हैं उसी प्रकार से माना गया है कि एक छोटा चम्मच देसी गाय का घी जलते हुए कंडे पर डालने से भारी मात्रा में ऑक्सीजन की उत्पत्ति होती है। इसलिए भारतवर्ष में प्राचीन काल से ही हवन करने की परंपरा रही है। इसमें गाय का घी ही उपयोग में लाया जाता है। प्रदूषण को दूर करने का इससे अच्छा कोई और साधन नहीं है।

एक अनुमान के मुताबिक भारत में कृषि में उपयोग होने वाले पशुधन की संख्या 55 करोड़ के करीब है। इसमें लगभग 20 करोड़ से अधिक संख्या में गायें हैं। भारत दुग्ध उत्पादन करने के मामले में विश्व का पहले नंबर का देश है। हर दिन करीब 18 करोड़ टन दूध का उत्पादन होता है। इस लिहाज से हम दुनिया के कुल दुग्ध उत्पादन का करीब 20 प्रतिशत उत्पन्न करते हैं। देश की अर्थव्यवस्था में भी दुग्ध उत्पादन का महत्वपूर्ण योगदान है। वर्तमान में भारत में लगभग 25 करोड़ लोगों की आय का माध्यम दूध और डेयरी उद्योग है। अनुमान है कि आने वाले एक दशक में हर साल दो करोड़ से ज्यादा लोगों को इस क्षेत्र से रोजगार के अवसर उपलब्ध होंगे।

गाय का दूध ही नहीं बल्कि इसका गोबर और गोमूत्र भी इसके पालकों की आर्थिकी को सहेजने और संवारने में मददगार है। हर साल देश में उपलब्ध गायों से करीब 10 करोड़ टन गोबर की प्राप्ति होती है। प्रमुखतौर पर इसका उपयोग ईंधन के तौर पर होता है। ईंधन के तौर पर इस्तेमाल होने वाले गोबर का मूल्य के आधार पर विश्लेषण किया जाए तो इसका कुल मूल्य

करीब 5000 करोड़ रुपये बैठता है। ईंधन के रूप में इसके उपयोग से न केवल पांच करोड़ टन लकड़ी की बचत होती है बल्कि यह पर्यावरण पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों को भी सीमित करता है। इसके अतिरिक्त गोबर का इस्तेमाल जैविक खाद के तौर पर भी होता है। जैविक खाद भूमि की उर्वरा शक्ति में 50 प्रतिशत की वृद्धि कर देता है। इसके चलते जैविक कृषि उत्पादों की उत्पत्ति होती है। वर्तमान में स्वास्थ्य कारणों को देखते हुए जैविक (ऑर्गेनिक) उत्पादों की मांग काफी तेजी से बढ़ रही है जिनकी कीमत सामान्य उत्पादों की तुलना में अधिक होती है। गोमूत्र चिकित्सा का वर्णन अथर्ववेद, चरक संहिता, बाणभट्ट, अमृत सागर आदि ग्रंथों में विस्तारपूर्वक बताया गया है। एक रूसी शोध के मुताबिक गाय के दूध में रेडियो विकिरण से रक्षा करने की सर्वाधिक शक्ति होती है। गाय का दूध एक ऐसा भोजन है जिसमें प्रोटीन कार्बोहाइड्रेट, शर्करा, खनिज, लवण, वसा आदि पोषक तत्व भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। यही वजह है कि गोमाता को हमारी धार्मिक आस्था का प्रतीक होने के साथ ही हमारी अर्थव्यवस्था और स्वास्थ्य का भी प्रमुख आधार माना गया है।

गाय से मिलने वाले उत्पादों की आर्थिकी को समझें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि गोवंश आधारित कृषि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाने में प्रमुख भूमिका निभा सकती है। इससे बेरोजगारी की समस्या का भी हल किया जा सकता है। आज अनेक ऐसे उद्योग हैं जो गौ–उत्पादों पर आधारित हैं। इनमें अगरबत्ती, धूपबत्ती, गमले, गत्ता, डायरी, वैवाहिक कार्ड, टाइल्स, पूजा की सामग्री आदि

प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त दैनिक उपभोग की वस्तुओं में भी गौ–उत्पादों का इस्तेमाल निरंतर बढ़ रहा है। इनमें मंजन, साबुन, फिनायल, मच्छरों को भगाने वाले उत्पाद, शैंपू, जैली आदि मुख्य रूप से शामिल हैं। केवल गोबर से ही बायोगैस और जैविक खाद आदि उत्पाद मिलते हैं। गोमूत्र, गाय के दूध से मिलने वाले घी आदि का इस्तेमाल विभिन्न प्रकार की आयुर्वेदिक औषधियों में उपयोग हो रहा है।

जहां तक गाय के दूध की पौष्टिकता का प्रश्न है, वह किसी से छिपा नहीं है। इसके पीछे कई वैज्ञानिक आधार भी हैं। गाय के दूध को मां के दूध के समान सर्वरोगनाशक माना गया है। गाय के दूध में उपलब्ध कैरोटीन नामक पदार्थ मां के दूध के अतिरिक्त और कहीं नहीं पाया जाता। इसके सेवन से मानव शरीर को अनेक असाध्य रोगों से मुकाबला करने की शक्ति प्राप्त होती है। इसी प्रकार गाय के दूध से प्राप्त होने वाले घी को बुद्धि तथा स्मृति क्षमता का विस्तार करने वाला माना जाता है। इसके अतिरिक्त यह शरीर में शुक्र धातु को बढ़ाने वाला, जठराग्नि प्रदीप्त करने वाला, शरीर बल बढ़ाने में सहायक और आंखों के लिए विशेष हितकारी माना गया है।

गोधन के आर्थिक महत्व को समझने के लिए यह आवश्यक है कि भारतीय परिवेश में गाय के महत्व को समझा जाए। प्राचीन काल से ही ग्रामीण क्षेत्रों में इसे संपन्नता के प्रतीक के तौर पर देखा गया है। घर में गायों की संख्या किसी भी गांव में उस घर के स्वामी की समृद्धता की सूचक होती थी। आधुनिक समाज में गाय के आर्थिक महत्व को कम आंका जा रहा है, जबकि देश में उपलब्ध गोधन की विशाल संख्या ग्रामीण भारत की अर्थव्यवस्था की रफ्तार को नई दिशा प्रदान कर सकती है। इस बात से कतई इनकार नहीं किया जा सकता कि आज की तारीख में भी यदि गोपालन को बढ़ावा दिया जाए तो यह किसी भी परिवार की आर्थिक संपन्नता में महत्वपूर्ण होने के साथ ही यह देश की अर्थव्यवस्था के विकास में भी विशेष सहायक हो सकती है।

Dr. Aastha Pathak

GOPALA AND GOMATA

We all know the heartiest connect between Shree Krishna and Gomata.

"Go" means cow in Sanskrit, and from the time Krishna was a baby, he loved his family's cows. In his youth, Krishna was called "Gopala," which means "protector of cows," and later "Govinda," the "herder of cows."

As a toddler, Shree Krishna was a very naughty boy–constantly getting into trouble, but making everyone laugh. The cow-milkers, called "gopis" or milk-maids in Krishna's childhood town, absolutely adored him and his prankster nature. Everyone knew how much Krishna loved to eat butter, and he'd often sneak into the gopi's homes to steal butter for his less fortunate friends, but the gopis secretly delighted in his visits, feeling honored that he would choose their homes to enter. To this day, Sri Krishna is sometimes referred to as Makhan Chor, or the butter thief. It's believed that, by making himself punishable, he made himself approachable as a God to humans.

In a similar story, Shree Krishna was out playing with his brother, Shree Balarama and some friends. Shree Balarama suddenly came running to their Mata, accusing Krishna of eating mud. Their mother was horrified, and Shree Krishna tried to play innocent. But when his Mata opened Shree Krishna's mouth to see if there was mud inside, instead, she saw the entire universe there within his throat. She

was stunned by the sudden realization of her son's divinity, and both she and Shree Balarama cowered in fear. On seeing this, Shree Krishna decided, kindly, to return the "veil of motherly love" to his mother's eyes, so that she would once again only be able to see him as her son, and not as God.

But Shree Balarama had the strength to serve Shree Krishna as both brother and God.

As a teenager,Shree Krishna continued working at the cow-fields with the other boys, and he would play music on his flute for his cows and his friends. It's said that his family raised 900,000 cows, and that Shree Krishna knew every single one of them by face and name. If one cow would go missing he would venture out until he could guide it home safely with his music. The gopis (milk-maids) fell more and more in love with him, and to this day, they're upheld as examples of perfect devotees of God. So Shree Krishna spent his youth socializing with friends and all the cow-herders and cow-milkers of Vrindavan.

Seeing how Shree Krishna acted–like a common cow-herder, joking and playing music and dancing – the God Brahma became suspicious about whether Krishna actually was God, or just a poor cow-hand. So the

four-headed God Brahma decided to test him. One day, while Shree Krishna was relaxing with his back turned, Lord Brahma flew in and stole all of the cows and cow-herders from Krishna's pasture and hid them in a cave. Then, he returned to the field to watch Shree Krishna inevitably lose his cool when he noticed his beloved cows were missing.

Instead, when Lord Brahma returned to the pasture, all of the cows and gopis and cow-herds were still there, as if nothing had happened. Lord Brahma went back to the cave, and they were there as well. How could they be in two places at once?

It turns out that Shree Krishna had been one step ahead the whole time. Secretly aware of Lord Brahma's plan, Shree Krishna had duplicated himself many times over, taking on the face of the cows and the workers – and it was these duplicate Shree Krishnas that Lord Brahma had hidden away in the cave, while the original cows remained unharmed in the field.

The way Shree Krishna protects and love gomata. May he also listen to our prayers and protect us from all the sorrows of world.

Sanjay Raman "Vidyavachaspati"

HOW COWS COMMUNICATE WITH EACH OTHER IN A HERD

Cows, as social animals, exhibit complex communication strategies within their herds. This communication is essential for maintaining social bonds, establishing hierarchies and coordinating group behavior. Scientific researchers have provided deeper insights into how these communication methods function and their implications for herd dynamics. By examining vocalizations, body language and olfactory communication, we can appreciate the sophisticated social interactions among cows.

Vocalizations : Vocalizations are a primary means of communication for cows, encompassing both contact and alarm calls. Research has shown that cows use specific vocal patterns in order to communicate different messages. Contact calls, commonly referred to as "moos," vary in frequency, pitch and duration. Studies have demonstrated that cows have individualized vocal signatures that allow them to recognize each other. For instance, a mother cow can very well distinguish the vocalizations of her calf from all the others in the herd. This individualized communication is crucial for maintaining social bonds and ensuring cohesion within the herd.

On the other hand the Alarm calls are characterized by higher pitch and intensity, serving as immediate warnings of danger. The acoustic properties of these calls are designed

to travel over long distances, ensuring that all herd members are alerted quickly. Scientific studies have observed that cows respond to alarm calls by increasing vigilance and grouping together, which enhances their collective ability to detect and evade predators. This behavior is indicative of the cows' evolved mechanisms for survival.

Body Language : Body language is also a very significant and critical component of cow communication, providing non-vocal cues about social dynamics and emotional states for instance Dominance and Submission. The Dominance hierarchies are established through body language. Dominant cows exhibit certain postures and movements, such as holding their heads high and walking with a confident gait. Submissive cows, in contrast, often lower their heads and avoid direct eye contact. Researchers have thus observed that these physical cues are consistent and understood universally within the herd, helping to reduce conflicts and maintain order.

Emotional States : Body language also conveys emotional states. For instance] a cow that is content will exhibit relaxed muscles, a lowered head and a slow, rhythmic chewing of cud. Thus conversely, an anxious or threatened cow will just show signs of tension, such as a rigid posture, rapid head movements and raised tail etc. These visual cues are vital for the herd to respond appropriately to each member's emotional state, thereby enhancing social harmony and collective well-being.

Olfactory Communication : Olfactory communication involves the use of odor to convey information, playing a pivotal role in social bonding and territory marking. Each cow has a unique scent profile, influenced by factors such as diet, health and genetics. This scent allows cows to recognize and remember individual members of their herd. Studies have shown that cows have a highly developed sense of smell, which they use to maintain social cohesion and maternal bonds for establishing individual recognition. For example, mother cows can identify their calves by scent, which is crucial for nurturing and protecting the young.

The Territorial Marking and Dominance : Cows also use olfactory signals to establish dominance and mark territory. By rubbing

their heads and bodies against objects, cows simply leave scent markers that strongly communicate their presence and social status to other herd members. These scent marks help to maintain the social structure within the herd, reducing the need for physical confrontations.

The Scientific Perspectives : From a scientific perspective, the communication methods of cows are grounded in evolutionary biology and ethology.

Evolutionary Adaptations : The vocal, visual and olfactory communication strategies observed in cows have evolved to enhance their survival and reproductive success. Vocalizations allow for efficient coordination and warning systems within the herd, reducing predation risks. Body language minimizes physical conflicts by clearly signaling social hierarchies and emotional states. Olfactory communication ensures that social bonds are maintained and territories are effectively managed and-Neuroscientific Insights: Recent studies in animal neuroscience have begun to explore how cows process and respond to these communication cues. Research has indicated that cows have complex neural mechanisms that enable them to interpret and react to vocalizations, body language and scents. These mechanisms are similar to those found in other social mammals, underscoring the advanced social intelligence of cows.

Therefore, in conclusion, Cows' communication within a herd is overall a multifaceted process involving vocalizations, body language and olfactory signals etc. Scientific research highlights the sophistication and evolutionary significance of these communication methods. Understanding how cow's interaction can provide valuable insights into their social behavior and welfare. Enhanced awareness of these communication strategies can also inform better management practices in agricultural settings, promoting the well-being of cows and the efficiency of dairy systems across the country.

गोमाता की महानता

संग गाय के सभ्यता,
करती सदा विकास।
गुरु-ग्रंथों में है लिखा,
गो-माँ का इतिहास।।

गो ऊर्जा वितरित करें,
गुरु भी ऊर्जा-दान।
गाय और गुरु शिष्य को,
दिलवाते सम्मान।।

गो से बढ़ कर जगत में,
गुरु केवल भगवान।
पंचगव्य प्राशन करें,
गाय ईश वरदान।।

गाय विज्ञान, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, धर्मशास्त्र, कृषिशास्त्र और आयुर्वेद है

नवल डागा, जयपुर
9460142430

गुरु शिक्षा का मोल कर,
देवी गाय महान।
जब बढ़ती ये भौम पर,
पंचगव्य वरदान।।

धैर्य-नम्रता-सघनता,
देती ज्ञान विवेक।
भाँति-भाँति के गुरु मिलें,
उनमें गो भी एक।।

काल जयी गुरु गाय हैं,
देती है उपदेश।
क्षीर पिला कर दे रही,
गुरु माता संदेश।।

"LPC DELHI, DELHI PSO, DELHI RMS, DELHI-6"
Email : gosampada@gmail.com
website : www.vhp.org

Registered No. DL-SW-01/4027/24-26
RNI No. 69508/98 प्रस्तुति : 13–14
प्रकाशन तिथि : 11 सितम्बर, 2024

हार्दिक निवेदन

सभी गोभक्त–गोप्रेमी बंधुओं से करबद्ध अनुरोध है कि वे इस पत्रिका का सदस्य अवश्य बनें और अन्य गोभक्तों को भी सदस्य बनायें। कृपया सभी लोग अपना वार्षिक अथवा आजीवन सदस्यता शुल्क निम्नलिखित बैंक व खाता नंबर में जमा कराएं –

पंजाब नेशनल बैंक, बसंत लोक, नई दिल्ली

खाता नम्बर - 04072010038910 IFSC CODE : PUNB0040710

नोट – शुल्क "भारतीय गोवंश रक्षण संवर्द्धन परिषद" के नाम पर जमा करें। सम्पर्क सूत्र : 011.

pnb punjab national bank
...the name you can BANK upon!

अब आप यूपीआई के माध्यम से भी पत्रिका का शुल्क जमा कर सकते हैं

SCAN & PAY USING ANY BHIM UPI APP

9958710672m@pnb

MERCHANT: BHARTIYA GOVANSH RAKSHAN SAMVARDHAN PARISHAD

BHIM BHARAT INTERFACE FOR MONEY | UPI UNIFIED PAYMENTS INTERFACE

प्रकाशक व मुद्रक राजेन्द्र प्रसाद सिंहल ने रायल प्रेस,
बी 81, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली से मुद्रित कर भारतीय गोवंश रक्षण संवर्धन परिषद् (विहिप)
संकटमोचन आश्रम, सेक्टर-6, रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली-22 के लिए प्रकाशित की। संपादक - देवेन्द्र नायक